International Journal of Humanities and Social Science Invention
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 6 Issue 5||May. 2017 || PP.61-63

स्त्री विमर्षः ऐतिहासिक परिपेक्ष्य

डा. लता व्यास

व्याख्याता

चौधरी बल्लू राम गोदारा राजकीय कन्या महाविद्यालय श्री गंगानगर

संक्षेप

किसी भी देश, समाज या युग की सामाजिक व्यवस्था एवं तत्सम्बन्धी दृष्टिकोंण का तब तक सही मूल्यांकन नही किया जा सकता, जब तक कि वहॉ के स्त्रियों की स्थिति एवं उनेक सम्बन्ध में प्रचलित मान्यताओं का सम्यक ढंग से अध्ययन न किया जाए। जहॉ तक प्राचीन भारत में स्त्रियो की स्थिति का प्रश्न है, इस दृष्टि से वैदिक युग को ही नारी के इतिहास का स्वर्ण काल माना जा सकता है, क्यों कि इस समय स्त्री कन्या, पत्नी एवं माता के रूप में अपनी उन्नति के शिखर पर दिखती है। लेकिन उत्तर वैदिक युग में ही नारी का जीवन उन्नतिशील रहते हुए भी किंचित उनकी स्थिति में गिरावट आना प्रारम्भ हो गया। एक तरफ स्त्रियों की स्थिती के प्रति जहॉ परम्परागत सम्मान का भाव दिखाई देता है, वही दूसरी तरफ नवीन अस्वस्थ अवधारणाओ का जन्म होता हुआ प्रतीत होता है, जिसके फलस्वरूप कालान्तर में उनकी स्थिति में गिरावट आयी, इसकी नीव उत्तर वैदिक कालीन ग्रन्थों में ही परिलक्षित होता है।

परिचय

प्रारम्भ में शैक्षिक सुविधाए स्त्रियों को प्रायः पुरूषों के परस्पर प्राप्त थी। बृहदारण्यक उपनिषद् में पंडिता कन्या (विदुषी) की प्राप्ति के लिए विशेष प्रकार की अनुष्ठान की प्रक्रिया दिखायी देती है। [1] अथर्ववेद में कन्या द्वारा व्रह्मचर्य आश्रम में शिक्षा ग्रहण करने का उलेख मिलता है। [2] शुक्ल यजुर्वेद में शिक्षित स्त्री एवं पुरूष को ही सर्वथा विवाह के लिए योग्य या उपयुक्त माना गया है। [3] वास्तव में कन्या ब्रह्मचर्य काल में अपने को न केवल विदुषी बनाती थी , बल्कि सामाजिक जीवन को भी उपयुक्त बनाने का प्रयास करती थी, जिसके फलस्वरूप शारीरिक एवं बौद्धिक शक्तियों का विकास करती हुई समाज एवं धर्म के सभी नियमों से पूर्ण परिचित हो जाती थी ।

उपनिषद युग तक स्त्रियां दार्शनिक विषयों के अध्ययन एवं चिंतन में निपूण होने लगी थी, और ऐसी स्त्रियां भी अज्ञात नही थी जो जीवन पर्यंत आध्यात्मिक चिंतन में लगी रहती थी। ऐसी कन्याओं को ब्रह्मवादिनी की संज्ञा से अभिहीत किया गया है । बृहदारण्यक उपनिषद में याज्ञवल्क्य की पत्नी मैत्रेयी को दार्शनिक ज्ञान से परिपूर्ण होने का उल्लेख है । [4] तथा इसी ग्रन्थ से यह भी विदित है कि याज्ञवल्क्य अनेक पंडितों को परास्त करने के उपरान्त गार्गी के विद्वता के समक्ष हतप्रद हो गये थे । [5]इसी प्रकार कौषितकि ब्राह्मण में कुमारी गन्धर्व ग्रहीत अग्निहोत्र में निपूण बतलाइ गयी है ।

नारीवादी आंदोलन से उभर आया स्त्री–विमर्श आज आधुनिक काल के परिप्रेक्ष्य में विविध आयाम ग्रहन कर चुका हैं। स्त्री के सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं आर्थिक हालातों से जुड़े तमाम सवाल इस विमर्श के मूल में हैं। स्त्री–विमर्श के माध्यम से स्त्री के शोशण, दमन और उत्पीड़न को वाणी मिल रही हैं। इस बहाने सदियों से पीड़ित स्त्री जाति को समाज में वास्तविक अधिकार प्राप्त हो इसकी पहल हो रही हैं। स्त्री विमर्शकार स्त्री के उत्पीड़न के साथ–साथ उन सवालों को भी उठा रहे हैं, जिनके मूल में स्त्रियों की उपेक्षा, निराशा, आतंक, भय और पिछड़ापन छिपा हुआ हैं। नारी सदियों से भेदभाव एवं शोशण का शिकार रही हैं। उसकी योग्यता को दबाकर पुरूश प्रधान समाज ने प्रत्येक क्षेत्र में उसका एक वस्तु के रूप में इश्तेमाल किया हैं। यह पुरूशी नीति स्त्री–विमर्श के बहाने सामने आ रही हैं।

हिंदी साहित्य में पिछले साठ वर्षो से अनेक परिवर्तन हुए। नारी मुक्ति आंदोलन, नारी विमर्ष के जरिए आज नारीवाद की नई भाषा, नया दृश्टिकोण सर्वत्र नजर आ रहा हैं। हिंदी साहित्य में नारी लेखन गंभीरता के साथ मुक्त होकर बिना किसी अवरोध की परवाह किए अपनी तकलीफों, दुःखों, विशादों और व्यथाओं को व्यक्त कर रहा हैं। निश्चित ही यह क्रांतिकारी परिवर्तन हैं। स्त्री–विमर्श को देखते समय इस बात का ध्यान रखने की भी आवश्यकता हैं कि इसका दृष्टिकोण सीमित न रहे। मृणाल पांडे के अनुसार –''नारी–विमर्श कतई स्त्रियों को बृहतर समाज से अलग–थलग रखकर देखने और हर क्षेत्र में पुरूषों के खिलाफ उन्हें प्रोत्साहित करने का दर्शन नहीं हैं। यह तो एक समग्र दृष्टिकोण हैं।'' स्त्री–विमर्श स्त्री के संपूर्ण व्यक्तित्व पर विचार करता हैं यह बात सही हैं किंतु समाज से अलग करके उसपर विचार

करना गलत हैं। बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में स्त्री–विमर्ष से प्रेरित साहित्य पर्याप्त मात्रा में लिखा गया जिसमें स्त्री और पुरूष दोनों ने अपना योगदान दिया हैं।

आश्वलायन गृहसूत्र (3.8.11) में स्त्रियों के समावर्तन संस्कार का उल्लेख है, इससे स्पष्ट होता है कि सूत्र काल तक स्त्रियों को वेदाध्ययन का अधिकार पूर्वत था । वे सामाजिक एवं धार्मिक उत्सवो में भी स्वतन्त्रता पूर्वक सहभाग कर सकती थी । अथर्ववेद में अलंकृता स्त्री के सभा में प्रतिभाग करने का वर्णन है। [6] तथा यज्ञ में पत्नी पति के साथ अनिवार्य रूप से सहभाग करती हुई दृष्टगत है। स्त्रियों को यज्ञ का अधिकारिणी भी कहा गया है । [7]जब की शतपथ ब्राह्मण में अपत्निक व्यक्ति को यज्ञ के लिए अनुपयुक्त अर्थात अयज्ञीय कहा गया है । [8] रामायण में राम को सीता की अनुपस्थिति में अश्वमेघ यज्ञ करने में असमर्थ बताया गया तब सीता की स्वर्णमयी प्रतिमा बनवाकर समस्या का निदान किया गया था । शतपथ ब्राह्मण में पत्नी द्वारा यज्ञ क्रियाओं का सम्यक सम्पादन एवं वेदी निर्माण में उसके सहयोग का उल्लेख है। [9] पारास्कर गृहसूत्र में उल्लेख है कि शस्य बृद्धि हेतु पत्नी स्वतंत्र रूप से भी सीता यज्ञ कर सकती थी, और अन्य धार्मिक कियाओं की भाँति उससे उत्पन्न फल के भोग का भी अधिकारिणी मानी जाती थी अकेले पुरूष स्वर्ग की अपेक्षा नही रखता था वाजपेय यज्ञ में यज्ञीय यूप के साहारे सीढी पर चढ़ता हुआ पति अपनी पत्नी से कहता है कि आओ हम दोनो साथ–साथ स्वर्गारोहण करें । [10] अब प्रश्न उठता है कि जब प्राचीन भारतीय समाज में नारी की स्थिति इतनी उत्कृष्ठ थी, तो कालान्तर में सतत गिरावट किन कारणो से उत्न्न हुई।

स्त्री विमर्श दो शब्दों से मिलकर बना है– 'स्त्री' और विमर्श । स्त्री का अर्थ महिला, नारी, औरत, लड़की मतलब लिंग के आधार पर स्त्री होना। विमर्श का अर्थ होता है बहस, संवाद, वार्तालाप या विचारों का आदान–प्रदान। अतः स्त्रियों को लेकर होने वाले बहस को हम स्त्री विमर्श कहते हैं। इन विम"र्शों के माध्यम से स्त्री विमर्श का अर्थ स्त्री की परंपरागत छवि या पहचान से एक नई स्त्री छवि या पहचान का निर्माण करना है। स्त्री विमर्श एक प्रकार से रूढ़ परंपराओं, मान्यताओं के प्रति असंतोष और उससे मुक्ति का स्वर है। पितृसत्तात्मक समाज के दोहरे नैतिक मापदंडों, मूल्यों व अंतर्विरोधों को समझने व पहचानने की गहरी अंतर्दृष्टि है। कई वर्षों से चली आ रही पुरुषों की दासता के विरोध में स्त्री के अधिकारों को लेकर उठायी गयी आवाज को स्त्री विम"र्श कहते हैं। परंपराओं से इस समाज व्यवस्था ने पुरुषों को जो छूट प्रदान की है उनमें से कुछ स्त्रियों ने अपने लिए भी वही छूट माँगनी प्रारंभ कर दी, जिसमें प्रमुख रूप से लैंगिक समानता, भेदभाव न होना और घरेलू हिंसा का विरोध, यौन उत्पीड़न का विरोध और समान वेतन का अधिकार जैसे अनेक मुद्दे शामिल हैं।

उक्त सन्दर्भो से वैदिक युगीन नारी की जिस अच्छी स्थिति का बोध होता है वह चिर स्थाई नही रह सकी । उत्तर वैदिक युग तक आते ही उनकी स्थिति पतनोत्मुख हो चली थी जिसके कारण स्त्रियों के विषय में विभिन्न प्रकार के हीन विचारों का प्रतिपादन एवं प्रचार होना प्रारम्भ हो गया था । साथ ही पत्नी के लिए भार्या या जाया शब्दो का प्रयोग दिखने लगा। भार्या शब्द स्त्री की अधीनता का संकेत है । तथा 'जाया ' शब्द नारी के प्रजजन कार्य के महत्व पर बल दिये जाने का प्रमाण है । [11] परवर्ती संहिताओं एवं ब्राह्मण ग्रन्थों में जहाँ कही भी स्त्रियों के महत्व पर उनकी उपयोगिता को पृथक करके विचार किया गया है, प्रायः उनकी भर्त्स्ना ही की गयी है । मैत्रायणी संहिता (3.6.3) में स्त्री को झूठ बोलने वाली तथा मृत्यु के देवता से सम्बद्ध बताया गया है। काठक संहिता नारी को भावुक और निर्वीर्य बताता है। [12] मैत्रायणी संहिता के एक प्रसंग में स्त्री पर चरित्रहीनता का दोष लगाते हुए कहा गया है कि पति द्वारा धन से खरीदी गयी स्त्री अन्य पुरूषो के साथ विचरण करती है। [13] इससे स्त्रियों के क्रय–विक्रय की प्रमाणिकता होती है, जिसका संकेत यास्क ने अपने ग्रन्थ निरूक्त में भी दिया है। [14] तैतरीय संहिता एवं जैमिनीय ब्राह्मण में स्त्रियों की हीनता का वर्णन करते हुए यज्ञ के अधिकार से विहीन एवं दुख का साधन बताया गया है, तथा कहा गया है कि इन्हे देवताओं ने क्रोध, आलस्य, नींद, भूख या वासना तथा द्युत क्रीडा जैसे दुर्व्यसनों के साथ मनुष्य को कष्ट देने के लिए बनाया है। शतपथ ब्राहमण में यहॉ तक बताया गया है कि अनेक स्त्रियों के बीच एक छोटा बालक भी हो तो उनमें श्रेष्ठ समझा जाएगा। [15]

उत्तर वैदिक युग में ही नारी को याज्ञिक अधिकारों से बंचित करने का प्रयास दिखता है, यद्यपि धर्मपत्नी के रूप में उसे बहिष्कृत नहीं किया जा सका तथापि प्रत्येक धार्मिक अधिकारों को सीमित एवं संकुचित कर दिया गया, जिसका उल्लेख उत्तर वैदिक साहित्य के उत्तरार्द्व में दिखायी देता है। जहॉ याज्ञिकों के एक सम्प्रदाय ने यह प्रतिपादित किया कि स्त्रियां यज्ञ की अधिकारिणी ही नही है, उनका स्थान यज्ञ वेदी के बाहर होना चाहिए। [16] हालॉकि शतपथ ब्राह्मण स्त्रियों को यज्ञ से बहिष्कृत करने का समर्थन नहीं करता है, फिर भी उन्हें अयज्वन शूद्रों की कोटि में रखता है तथा उनकी अपवित्रता की घोषणा करता है। [17] स्त्रियों का धार्मिक अनुष्ठानों से बहिष्कार एक आकस्मिक घटना नहीं थी, बल्कि उनके अधिकारों का अपहरण मन्द गति से हुआ। यज्ञ में होने वाले विभिन्न अनुष्ठान धीरे–धीरे स्त्रियों के हाथ से निकलने लगा। [18] जैसे सोमयाग में प्रवर्ग्य नामक कृत्य (धर्म नामक गर्म वर्तन में दूध डालना) पहले पत्नी द्वारा किया जाता था, जो बाद में उद्गाता करने लगा।

पूँजीवादी सभ्यता के आदर्श 'ग्लोबल–मीड़िया' की कृपा से सबसे लिए अनुकरणीय बनते जा रहे हैं। स्त्री की बोद्धिक कियात्मकता मीड़िया के लिए कोई महत्त्वपूर्ण नहीं हैं बल्कि वह कितनी 'सेक्सी' है इसपर उसकी अत्याधुनिकता नापी जाती हैं। मीड़िया उसे विभिन्न विज्ञापनों एवं विभिन्न कार्यक्रमों को आकर्शक बनाने के लिए मनचाहा इस्तमाल

करता हैं। स्पश्ट हैं कि खुद को आधुनिक समझाने के भ्रम में आकर स्त्री खुद को बाजारवादी षक्तियों के हाथ सौंप देती हैं। आत्माभिमान, स्वाभिमान, प्रतिमा, खुद की क्षमता यह सभी बातें फिर खोखली हो जाती हैं। मार्केट के इस खेल के विरोध में जब–जब विरोध मुखर होता हैं उसे स्त्री की स्वतंत्रता का विरोध घोशित कर इस विरोध को दबाया जाता हैं और दुर्भाग्य से इसमें स्त्रीवादी आंदोलन के मुखिया ही बढ–चढकर भाग लेते हैं। सुरेष पंडित के अनुसार ''बुद्धि और विचार की दुनिया से निकाल करस्त्री को रूप सौंदर्य और भोग–विलास की ओर ले जाने के पीछे एक सुनियोजित रणनीति होने की संभावना से इंकार नही किया जा सकता। क्योंकि यह एक ओर तो उसे अपनी स्वाधीनता और समानाधिकार के लिए किए जानेवाले संघर्ष के रास्ते से भटकाती हैं औंर दूसरी ओर उसे उपभोक्तावाद का बरबस अनुयायी बनाती हैं।''स्पष्ट है कि स्त्री की आजादी का गलत अर्थ निकाला जा रहा हैं। स्त्री के हित और आजादी की दलिलें देकर उसे फिर से पुरूशी मानसिकता के अधीन किया जाने लगा हैं। इतना जो जरूर हैं कि स्त्री को अपनी समज–विवेक के अनुसार जीने की स्वतंत्रता उसे किसी न किसी बहाने नहीं दी जा रही हैं, चाहे वह मीड़िया पर दिखनेवाली अर्धनग्न स्त्री हो या फिर परदे में मुँह छिपाकर जीने के लिए अभिषप्त मुस्लिम स्त्री हो। जब तक उसे इन सारे पिंजड़ों से मुक्ति नहीं मिलती तब तक स्त्री मुक्ति की बातें अधुरी ही रह जाएँगी।

उक्त प्रमाणों के आधार पर यह तो नही कहा जा सकता कि उत्तर वैदिक युगीन नारी धार्मिक जीवन से वहिष्कृत कर दी गयी, क्यों कि कई सन्दर्भो में पति पत्नी साथ–साथ यज्ञ करते सन्दर्भित है, लेकिन यह अवश्य है कि स्त्रियों के सम्बन्ध में नवीन विचारों एवं मूल्यों का उन्मेष प्रारम्भ हो रहा था। अतएव भारतीय नारी के पतन का स्वरूप जो कालान्तर में दिखायी देता है उसका बीज उत्तर वैदिक युग की सामाजिक–धार्मिक व्यवस्था में ही प्रवेश कर चुका था।

सन्दर्भ – सूची

1. वृहदारण्यक उपनिषद् 6. 4. 17
2. अथर्ववेद – 11.5.18
3. शुक्ल यजुर्वेद 8.1
4. वृहदारण्यक उपनिषद् 2.4.3 एवं 4.5.4
5. वही 3.6.8
6. अथर्ववेद – 2.3.6.1
7. वही 11.1 17. 27 योषितो यज्ञिया इमा : ।
8. शतपथ ब्राह्मण 5.1.6.10
9. वही 1.9 2.1, 1.9.25
10. वही 5.2.10
11. उत्तर वैदिक समाज एवं संस्कृतिः एक अध्ययन। डॉ वी0 वी0 राव
12. काठक संहिता 28 8 44
13. मैत्रायणी संहिता 1.10.11
14. निरूक्त 3.4
15. शतपथ ब्राह्मण 1.3.1.9
16. शांखायन ब्राह्मण 27.4 अयज्ञिया वैपल्यो वहिर्वेदिहिताः ।
17. शतपथ ब्राह्मण 14.1.1.13
18. वही 1.1.4.13 वही – पत्नी कर्मेव एतेंऽत्रकुर्वन्ति यदुद्गातरः ।